# कम्युनिज़्म ने अस्सी साल पहले फ़ासीवाद को हराया था और एक बार फिर हराएगा : अड़तालीसवाँ न्यूज़लेटर (2025)

आठवीं रूट सेना का बिगुलवादक, चीन, 1942.
[साभार: शा फेई।]

प्यारे दोस्तो,

**ट्राईकॉन्टिनेंटल : सामाजिक शोध संस्थान** की ओर से अभिवादन।

13 नवंबर को चीन के शंघाई में ग्लोबल साउथ अकादमिक फ़ोरम में हमने अपना नवीनतम **शोध** जारी किया जिसका शीर्षक है *The 80th Anniversary of the Victory in the World Anti-Fascist War – Understanding Who Saved Humanity: A Restorationist History* [फ़ासीवाद के विरुद्ध जंग की अस्सीवीं वर्षगाँठ : मानवता को किसने बचाया : एक पुनर्स्थापनावादी इतिहास] इस फ़ोरम में मैंने इस अध्ययन के बारे में 'Two Lies and an Enormous Truth' [दो झूठ और एक बहुत बड़ा सच] नाम से जो वक्तव्य दिया था वह संपादित रूप में यहाँ पेश किया जा रहा है।

लेनिनग्राद शहर के क्रास्नोग्वार्देइस्की हाउसिंग एंड यूटिलिटीज विभाग में, मोर्चे पर तैनात सैनिकों की 48 पत्नियों ने चूल्हा बनाना, छत निर्माण और प्लमिंग का काम सीखा। 18 अप्रैल 1943।
[साभार: जॉर्जी कोनोवालोव।]

अगस्त 1942 की शुरुआत में सोवियतों ने लेनिनग्राद में हर जगह लाउडस्पीकर लगा दिए। यह शहर 300 से भी ज़्यादा दिनों तक घेरेबंदी में रहा। लोग भूखों मर रहे थे। संगीत निर्देशक कार्ल एलीयसबेरग लेनिनग्राद रेडियो ऑर्केस्ट्रा चलाते रहे, वे अभ्यास करते थे और अपने संगीतकारों को ख़ुद भोजन केंद्रों तक ले जाते थे। 9 अगस्त को एलीयसबेरग लेनिनग्राद रेडियो ऑर्केस्ट्रा के बच गए 15 लोगों और सैन्य बैंड के कुछ सदस्यों को लेकर बोल्शॉय फ़िल्हार्मानिक हॉल पहुँचे। उन्होंने डिमीट्री शॉस्टकोविच की सिम्फ़नी नं. 7 (लेनिनग्राद सिम्फ़नी) बजाई, जिसका प्रसारण रेडियो और सार्वजनिक लाउडस्पीकरों के ज़रिए लोगों तक पहुँचाया गया।

 Dedicated to Victory Day: Dmitry Shostakovich. Symphony № 7 in C Major (Leningrad) सुनें

दिमित्री शोस्ताकोविच की सिम्फनी नंबर 7, वालेरी गेर्गिएव के निर्देशन में मारिंस्की ऑर्केस्ट्रा द्वारा 2020 में प्रस्तुत।

इस सिम्फ़नी के चार अंग हैं। पहला, शांत खंड युद्ध से पहले के लेनिनग्राद की याद दिलाता है। दूसरा भाग, स्नेयर ड्रम (एक तेज़ आवाज़ वाला ड्रम) की लयात्मक पुनरावृत्ति पर आधारित है जिसकी आवाज़ धीरे-धीरे बढ़ती जाती है और यह नाज़ी अतिक्रमण की याद दिलाता है। तीसरे भाग में मुख्यत: तार और हवा आधारित वाद्य यंत्रों का प्रयोग हुआ है और यह भाग सोवियत जनता की पीड़ा को दर्शाता है, जिनमें से लाखों या तो मारे जा चुके हैं या मौत की ओर धकेले जा रहे हैं। सी मेजर में दमदार और गौरवशाली अंतिम भाग फ़ासीवाद की हार की प्रतीक्षा करने जैसा है। उन्हें उस वक़्त मालूम नहीं था लेकिन उन्होंने तब तक घेरेबंदी के दौर का बस लगभग आधा ही सफ़र पार किया था। उन्हें भूख और युद्ध के 536 से ज़्यादा दिन अभी और झेलने थे। सख़्त घेरेबंदी के बीच नाज़ी टुकड़ियों की ओर लगे लाउडस्पीकरों से सिम्फ़नी का कार्यक्रम करना ताकि जर्मन सत्ता के कानों तक उनकी आवाज़ जाए, यह सोवियत जनता के दृढ़ संकल्प को दर्शाता है। सोवियत अभिलेखागारों में एक ख़ुफ़िया विभाग के अधिकारी द्वारा लिखा एक वाक्य है : 'दुश्मन भी ख़ामोशी से सुन रहा था। वह जानता था कि यह मायूसी पर हमारी विजय का संगीत है'। बाद में एक जर्मन क़ैदी ने कहा कि वह सिम्फ़नी 'शहर से निकले एक भूत जैसी थी जिसे हम मार नहीं सकते थे'

उत्तरी काकेशियन मोर्चे की 18वीं सेना की 255वीं मरीन ब्रिगेड की एक टुकड़ी युद्ध की तैयारी करती हुई, 1943.
[साभार: येवगेनी खाल्देई।]

हमारे शोध में दिखाया गया है कि सोवियत लाल सेना ने पूर्वी यूरोप में अपनी कार्रवाइयों में 80% वेहरमाच (जर्मन सेना) को बर्बाद कर दिया था। जब तक पश्चिमी सेनाएँ जर्मनी की सरहदों के पास पहुँची तब तक नाज़ी सत्ता बर्बाद हो चुकी थी। सोवियत लाल सेना ने ही बंदी शिविरों से ज़्यादातर लोगों को आज़ाद करवाया था, और यह जिस वैज्ञानिक ढंग से आगे बढ़ी उससे पूर्वी यूरोप के रोमानिया जैसे नाज़ियों के सहयोगी हथियार डालने या पाला बदलने के लिए मजबूर हो गए। नाज़ियों के ख़िलाफ़ सोवियत संघ अपनी पूरी ताक़त से इसलिए लड़ पाया क्योंकि इसकी पूर्वी सरहद पर जापानी सेना के हमलों से इसका बचाव चीन के कम्युनिस्ट और राष्ट्रवादी (राष्ट्रवादी कुओमिंतांग या KMT चीन का एक राजनीतिक दल) कर रहे थे। कम हथियारों के बावजूद चीनी कम्युनिस्टों और राष्ट्रवादियों ने जापानी सेना को भारी नुक़सान पहुँचाया, उन्होंने इसकी 60% सेना को अपने साथ जंग में उलझाए रखा और प्रशांत महासागर के तमाम टापुओं तक पहुँचती अमेरिकी सेना से इसका सामना होने से भी रोका।

अगर चीनियों ने जापानी सेना को उलझाए न रखा होता तो सोवियत संघ बर्बाद हो जाता (और नाज़ी यूरोप पर क़ब्ज़ा

कर लेते) और शायद अमेरिकी सेना सायपन (1944) और इवो जीमा (1945) की लड़ाई में जीत हासिल नहीं कर पाती। सोवियत लाल सेना और चीनी कम्युनिस्टों और राष्ट्रवादियों के लाखों सैनिकों ने फ़ासीवाद को हराने के लिए शहादत दी (इसका सही-सही आँकड़ा हमारे शोध में दिया गया है, जो 5 से 10 करोड़ के बीच है)। मई 1945 में नाज़ी सत्ता के बर्बाद होने तक साफ़ हो चुका था कि जापानी सैन्यवाद भी आत्मसमर्पण की राह पर है। इसलिए जुलाई 1945 में अमेरिका ने जो ट्रिनिटी [परमाणु] परीक्षण किए और हिरोशिमा (6 अगस्त) और नागासाकी (9 अगस्त) पर बम गिराए वह ग़ैर-ज़रूरी था। सोवियत नागरिकों और चीनी कम्युनिस्टों तथा राष्ट्रवादियों के अथाह बलिदान ने सामूहिक बर्बादी के इस हथियार के इस्तेमाल की ज़रूरत को ख़त्म कर दिया था। अमेरिका द्वारा फिर भी इसका इस्तेमाल बताता है कि साम्राज्यवाद के लिए इंसानी जान की क़ीमत कुछ भी नहीं और यही आज हम **ग़ज़ा** में होता हुए भी देख रहे हैं।

पैरामेडिक वेरा आंद्रेयेवा लियोनोवा (जन्म 1916, बाएं), साउथवेस्टर्न फ्रंट के तीसरे गार्ड्स कैवलरी कोर की छठी गार्ड्स कैवलरी डिवीजन की दूसरी मेडिकल बटालियन की एक मेडिकल असिस्टेंट, और नर्स मारिया ओस्ट्रोटेंकोवा, घायल सैनिक एर्मूलेंको का प्राथमिक उपचार करती हुईं, अप्रैल 1942.
[साभार: मिखाइल सामोइलोविच बर्नश्टीन।]

**पहला झूठ :** पश्चिमी मित्र राष्ट्रों ने शुरुआत से ही फ़ासीवाद का विरोध किया और इसके ख़िलाफ़ जंग को इन्होंने ही जीता।

**सच :** 1917 की अक्टूबर क्रांति के शुरू होते ही पश्चिमी देशों ने अपनी सेनाएँ इसे दबाने के लिए भेजी। दिसंबर 1917 में सोवियत सरकार ने शांति की बात की लेकिन जर्मनी ने फिर भी फ़िनलैंड और नए-नए बने सोवियत गणराज्य पर हमला कर दिया, जिससे कई देशों द्वारा एक मिले-जुले अतिक्रमण की शुरुआत हो गई (यूनाइटेड स्टेट्स, यूनाइटेड किंडम, फ्रांस, रोमानिया, एस्टोनिया, ग्रीस, ऑस्ट्रेलिया, कनाडा, जापान, और इटली की सेनाएँ यहाँ पहुँच गईं)। ब्रिटिश राजनेता

विन्स्टन चर्चिल के लेखों और भाषणों से मित्र राष्ट्रों का रवैया साफ़ हो जाता है, चर्चिल ने कहा था कि 1919 में मित्र राष्ट्रों को 'बोल्शेविज़म की मूर्खता' को ख़त्म करना होगा (इसके 30 साल बाद उन्होंने कहा कि 'बोल्शेविज़म का उसके जन्म के समय ही अगर गला घोंट दिया जाता तो यह मानव जाति के लिए अनकहा वरदान होता)। 30 और 40 के दशक में पश्चिमी सरकारें चाहती थीं कि जर्मनी और इटली के नाज़ी सोवियत संघ की तरफ़ अपनी बंदूक़ें ताने और उसे तबाह कर दें। यही 'तुष्टीकरण' था – उन्होंने अडोल्फ़ हिटलर के कम्युनिस्ट विरोध को स्वीकार किया और उसे अपनी सेना का विस्तार करने दिया जब तक कि इसका निशाना सोवियत संघ था। हालाँकि ब्रिटेन और फ्रांस ने 1939 में जर्मनी के ख़िलाफ़ युद्ध की घोषणा कर दी थी लेकिन इसके बाद महीनों तक इन्होंने कोई क़दम नहीं उठाया – इस दौर को छद्म युद्ध का नाम दिया गया।

1941 में हिटलर की सेनाओं ने सोवियत संघ में घुसपैठ की। 1943 के तेहरान सम्मेलन में यूनाइटेड स्टेट्स और यूनाइटेड किंडम को मानना पड़ा कि फ़ासीवाद को तबाह करने का काम लाल सेना ही कर रही थी। राजा जॉर्ज VI की तरफ़ से चर्चिल ने सोवियत नेता जोसेफ़ स्टालिन को शेफ़फ़ील्ड स्टील की बनी एक तलवार भेंट की। तलवार का नाम था 'स्टालिनग्राद की तलवार' और यह घेरेबंदी के दौर में सोवियत जनता द्वारा बहादुरी दिखाने और नाज़ियों को हराने के लिए दी गई थी (इस घेरेबंदी में बीस लाख लोग मारे गए थे)। लेकिन यूरोप में चल रहे इस युद्ध में शामिल होने के लिए मित्र राष्ट्रों को इसके बाद भी एक साल लग गया, यानी 1944। तब तक लाल सेना (और मित्र राष्ट्रों के हवाई हमलों) ने जर्मन सेना को बिलकुल बर्बाद कर दिया था। पश्चिमी देश इसलिए जंग में कूदे क्योंकि उन्हें डर था कि लाल सेना जर्मनी में घुस आएगी और यूरोप के बीचोंबीच अपने पैर जमा लेगी।

पश्चिमी सरकारों के लिए असली संघर्ष उदारवाद और फ़ासीवाद के बीच नहीं था : बल्कि साम्राज्यवादी (या जंगी) ख़ेमे – जिसमें फ़ासीवादी और उदारवादी दोनों शामिल थे – और समाजवादी (या शांति) ख़ेमे के बीच था। यह विरोधाभास 1917 से 1991 तक जारी रहा, इसी बीच था द्वितीय विश्व युद्ध – फ़ासीवाद के विरुद्ध दुनिया की लड़ाई।

फ़ुतुयू ग्रेट वॉल पर आठवीं रूट सेना की एक बैठक, 1938.

[साभार: शा फेई।]

**दूसरा झूठ :** जापानी सैन्यवाद की हार प्रशांत सागर में हुए युद्ध में अमेरिका की कुर्बानियों और हिरोशिमा तथा नागासाकी पर गिराए गए परमाणु बमों की वजह से हुई।

**सच :** दुनिया में फ़ासीवाद के विरुद्ध जंग 1939 में जर्मनी द्वारा ऑस्ट्रिया के अतिक्रमण से नहीं शुरू हुई थी। यह तो इससे दो साल पहले चीन में शुरू हुई थी, जब मार्को पोलो पुल की घटना हुई थी (जुलाई 1937 में बीजिंग के पास एक लड़ाई के बाद जापान ने पूरी ताक़त से चीन पर हमला कर दिया) और कोरिया के ख़िलाफ़ अमेरिका की जंग तक भी जारी थी, कोरिया की लड़ाई आख़िर रुकी थी 1953 के युद्धविराम के बाद। लाखों बहादुर देशभक्त और फ़ासीवाद-विरोधी लोगों ने जापानी सैन्यवाद के ख़िलाफ़ लड़ाई लड़ी, जिसने कोरिया और इंडो चाइना में दक्षिणपंथ के सबसे ख़राब तत्वों को आकर्षित किया। दिसंबर 1941 में अमेरिका युद्ध में शामिल हुआ, तब तक चीनी राष्ट्रवादियों और कम्युनिस्टों – साथ ही इंडोचाइना और दक्षिणपूर्व एशिया में राष्ट्रीय मुक्ति सेनाओं – ने 60% जापानी सैनिकों को उलझाए रखा, जिससे वे सोवियत संघ के पूर्वी मोर्चे पर हमला करने में असमर्थ रहे। 1940 के हंड्रेड रेजिमेंट्स ऑफेंसिव के अपार बलिदान को नहीं भुलाया जाना चाहिए, जहाँ जनरल झू डे ने 4,00,000 कम्युनिस्ट सैनिकों का नेतृत्व कर उत्तरी चीन में जापानी इंफ्रास्ट्रक्चर (जिसमें 900 किलोमीटर रेलवे लाइन शामिल थी) को नष्ट किया था।

अमेरिकी नौसेना के इवो जीमा की ऊँचाइयों पर चढ़ने या परमाणु बम के आगे जापानियों के आत्मसमर्पण करने की गाथा काफ़ी प्रचलित है। फिर भी इसमें यह तथ्य शामिल नहीं कि जापानी पहले ही काफी हद तक हार चुके थे, कि वे आत्मसमर्पण के लिए तैयार थे, और यह भी कि हिरोशिमा और नागासाकी सैन्य अड्डे नहीं थे। अगस्त 1945 में जो हुआ वह सैन्य रणनीति से जुड़ा नहीं था : यह पूरी तरह से अमेरिकी शक्ति का प्रदर्शन था, दुनिया के लिए उस नए हथियार का संदेश जो अमेरिका ने विकसित किया था और एशिया में कम्युनिस्टों के लिए एक चेतावनी कि इस हथियार का इस्तेमाल उनके ख़िलाफ़ किया जा सकता है। फ़ासीवाद को हराने के लिए मरने वाले लाखों एशियाई मज़दूरों और किसानों – जिनमें बर्मा में मेरे परिवार के सदस्य भी शामिल हैं – को परमाणु विस्फोट के ज़हरीले बादल ने निगल लिया। यह लोक स्मृति में प्राथमिकता लेने लगा। दक्षिणपूर्व एशिया की हर इंच जमीन के लिए लड़ने वाले लोगों की जगह यह बम एक नायक के रूप में उभरा। यह दूसरा झूठ है।

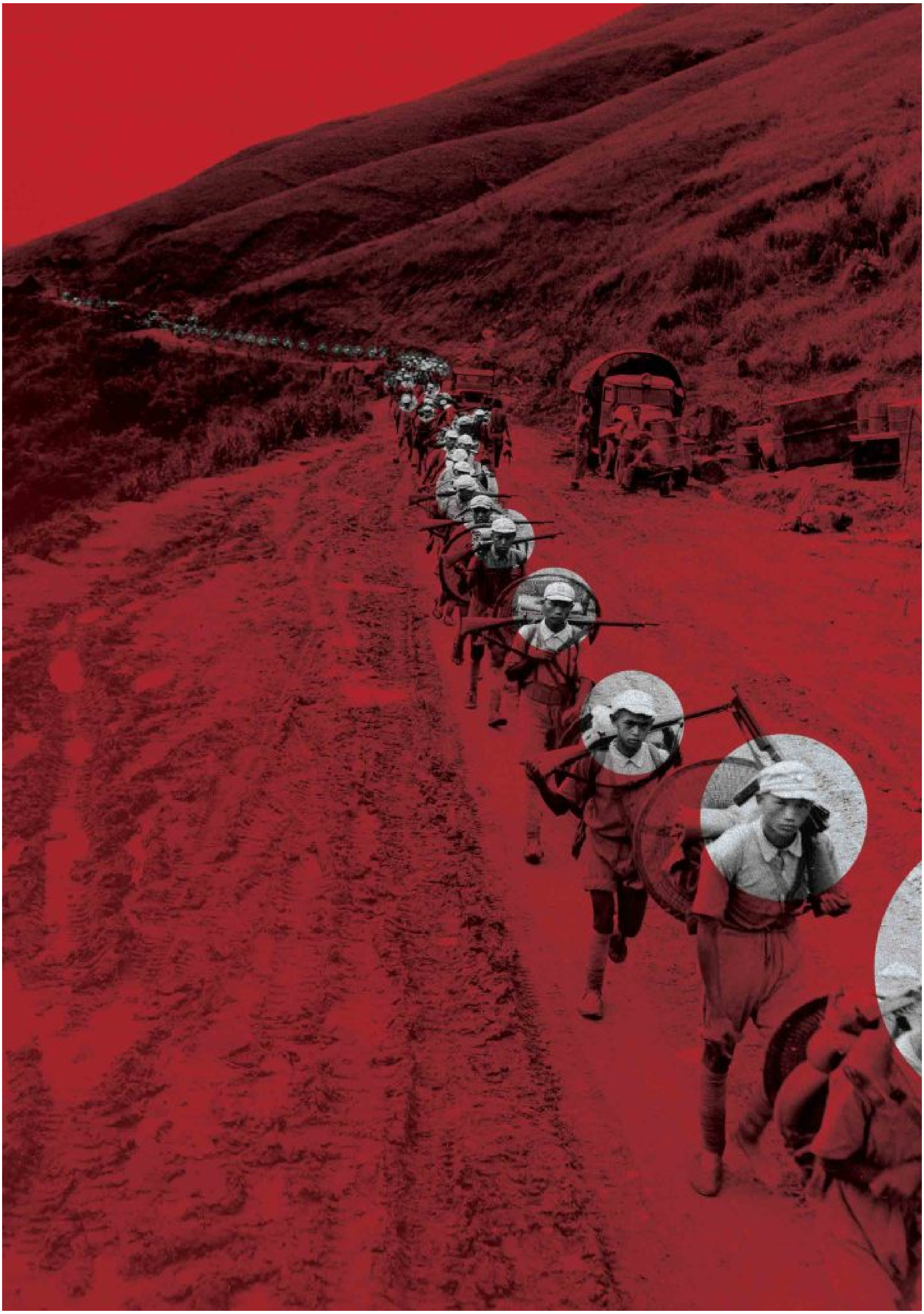

54वीं सेना 9 अगस्त 1945 को चीन के पा-टू में रेड रिवर के पार 600-फुट लंबे कैटवॉक की ओर एक खड़ी पहाड़ी से उतरती हुई।>
[टी/3 रेज़्कोवास्की से साभार]

**बहुत बड़ा सच:** इन दो झूठों के बीच एक बहुत बड़ा सच है जो हमारी लोक स्मृति में दफ़न हो गया है : फ़ासीवाद संप्रभुता और गरिमा का निषेध है, उपनिवेशवाद का ही एक भयानक रूप। इन दोनों के बीच अंतर करना मुश्किल है। आख़िरकार, जनसंहार औपनिवेशिक शासन की एक संरचनात्मक विशेषता था (कांगो में मारे गए छह लाख लोगों, दक्षिण पश्चिम अफ्रीका में जर्मनी द्वारा हेरेरो और नामा लोगों के जनसंहार, अमेरिका के मूल निवासियों के जनसंहार, और 1943 में भूख से मारे गए तीस लाख बंगालियों के बारे में सोचें)।

जर्मन फ़ासीवाद और जापानी सैन्यवाद की हार के बाद, डच, फ्रांसीसी और ब्रिटिश, अपने अमेरिकी सहयोगियों के साथ, इंडोनेशिया, इंडोचाइना और मलय में अपने उपनिवेशों पर दावा करने लौट आए। 1940 और 1950 के दशक में इन औपनिवेशिक युद्धों की हिंसा बहुत भयावह थी। इंडोनेशिया को फिर से उपनिवेश बनाने के डच प्रयास के बारे में राष्ट्रवादी नेता सुकर्णो ने कहा, 'वे इसे पुलिस कार्रवाई कहते हैं, लेकिन हमारे गाँव जलते हैं, हमारे लोग मरते हैं, और हमारा राष्ट्र अपनी आजादी के लिए खून बहाता है'। एक मलयाई कम्युनिस्ट, चिन पेंग ने कुछ ऐसा ही कहा : 'हम इसलिए उठ खड़े हुए क्योंकि हमने गाँवों को भूखा मरते देखा, आवाज़ों को पैसे और ताकत से दबते देखा'। सर जेराल्ड टेम्पलर, जिनकी देखरेख में मलय में ब्रिटिश आपातकाल चला, ने एक विद्रोह के बाद कहा कि यह 'पाँच हजार कायरों का गाँव' था और ग्रामीणों को चावल देने से इनकार करके उन्हें भूखा मार दिया।

गाँव के गाँव जलाए गए। गाँव वालों को भूखा मारा गया। यह उपनिवेशों की पुनर्विजय के प्रयास और फिर कोरिया पर अमेरिकी युद्ध की वास्तविकता थी। जब अमेरिका ने कोरिया में अपने अभियान शुरू किए, तो राष्ट्रपति हैरी ट्रूमैन ने कहा कि उनकी सेना को 'हर वह हथियार इस्तेमाल करना चाहिए जो हमारे पास है' – जापान पर परमाणु हथियारों के इस्तेमाल को देखते हुए एक सिहरन पैदा करने वाली टिप्पणी। लेकिन परमाणु बम की कोई ज़रूरत नहीं थी, क्योंकि हवाई बमबारी ने उत्तरी कोरिया के शहरों का नामोनिशान मिटा दिया था। जैसा कि मेजर जनरल एमेट ओ'डॉनेल ने 1951 में अमेरिकी सीनेट को बताया, 'सब कुछ नष्ट हो गया है। नाम लेने लायक कुछ भी खड़ा नहीं है। कोरिया में और कोई लक्ष्य नहीं बचे थे'। यह उनका रवैया था : फ़ासीवाद या उपनिवेशवाद – जो भी आप कहना चाहें।

पश्चिमी उपनिवेशवादियों ने जापान, कोरिया, इंडोचाइना और अन्य देशों में फ़ासीवादी तत्वों को पुनर्जीवित किया और मज़दूरों, किसानों और कम्युनिस्टों के खिलाफ एक अंतर्राष्ट्रीय धुरी को मज़बूत करने के लिए उनके साथ गठबंधन किया। इससे यह पता चलता है कि पश्चिमी उपनिवेशवादी फ़ासीवाद-विरोधी बिल्कुल भी नहीं थे। उनका असली दुश्मन यह संभावना था कि मज़दूर और किसान परिस्थितियों को समझने की स्पष्टता और आत्मविश्वास विकसित कर लेंगे और एक समाजवादी भविष्य चुन लेंगे।

बर्लिन पर कब्जा करने के बाद सोवियत सैनिक ब्रैंडेनबर्ग गेट के क्वाड्रिगा पर लाल झंडा फहराते हुए, मई 1945।[साभार: येवगेनी खाल्देई]

बड़ा सच यह है कि सोवियत लाल सेना और चीनी कम्युनिस्टों और राष्ट्रवादियों ने ही वास्तव में नाज़ी जर्मनी और सैन्यवादी जापान को हराया था। इन्हीं ताकतों ने फ़ासीवाद के ख़िलाफ़ सबसे अधिक बलिदान दिया और फ़ासीवाद, पूंजीवाद और उपनिवेशवाद के बीच घनिष्ठ संबंध को समझा। कोई भी फ़ासीवाद-विरोधी उपनिवेशवाद या पूंजीवाद के पक्ष में नहीं हो सकता। यह बिल्कुल असंभव है। ये विरोधी संरचनाएं हैं।मेरा मन अभी भी अगस्त 1942 के लेनिनग्राद में है। उस ऑर्केस्ट्रा और शोस्ताकोविच की सिम्फनी नंबर 7 को याद करें। नाज़ी सैनिकों ने शहर को घेर रखा है। सब कुछ खामोश है। फिर संगीत शुरू होता है। यह एक घंटे तक चलता रहता है। और फिर, संगीत बंद हो जाता है।

स्नेह सहित,

विजय